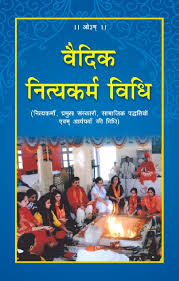
**ओ३म्**

**‘मनसा परिक्रमा से सभी दिशाओं में ईश्वर की अनुभूति कर सब प्रकार से**

**हमारी रक्षा के लिए उसका धन्यवाद करना हम सबका परम कर्तव्य’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

वैदिक सनातन घर्म में पंच महायज्ञों को नित्य प्रति दो समय प्रातः व सायं करने का विधान है। इन पंच महायज्ञों में प्रथम कर्तव्य के रूप में ब्रह्मयज्ञ करने का विधान है। ब्रह्मयज्ञ के इतर नाम सन्ध्या वा ईश्वरोपासना हैं। सन्ध्या भलीभांति ईश्वर का ध्यान करने को कहते हैं। यही सच्ची ईश्वर पूजा है। मूर्तिपूजा व वेदविरुद्ध पूजायें इसका पर्याय कदापि नहीं हो सकती। मूर्तिपूजा में तो साधक का ध्यान निराकार, सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ व सर्वरक्षक ईश्वर में न होकर एकदेशी पाषाण व धातु की जड़ गुणों वाली मूर्ति में होता है। संसार में जितने भी पदार्थ हैं वह सब ईश्वर के बनायें होने से उनमें व्याप्त ईश्वर जो ब्रह्माण्ड सहित हमारी जीवात्मा के भीतर भी एकरस से विद्यमान है, उसके गुणों व उपकारों का सम्यक् ध्यान वा धारण किया जाता है। ईश्वर का प्रातः एवं सायं की सन्धि वेला में ध्यान करने का कारण उसके गुणों एवं उपकारों के लिए उसका धन्यवाद करना है। उसके गुणों का वेदों व आर्ष ग्रन्थों के स्वाध्याय द्वारा ज्ञान प्राप्त कर चिन्तन मनन व ध्यान कर उसे अपने जीवन में धारण करने का प्रयास किया जाता है। यही मनुष्य की उत्पत्ति व मनुष्य जीवन का मुख्य उद्देश्य है। ईश्वर ज्ञान स्वरूप, अग्नि व प्रकाश स्वरूप तथा सर्वज्ञ है। ध्यान करने से हमारी आत्मा भी ईश्वर के गुणों के अनुरूप बननी आरम्भ हो जाती है। दुर्गुण, दुव्र्यस्न व दुःख दूर होने लगते हैं तथा कल्याकारी गुण, कर्म व स्वभाव मनुष्य के बनने आरम्भ हो जाते हैं। हमारे प्राचीन सभी ऋषि, मुनि, योगी, राजा, न्यायाधीश, सेनाध्यक्ष, आचार्य, सदगृहस्थी व ब्रह्मचारी ईश्वर का ध्यान प्रातः व सायं दोनों समय किया करते थे। इसी कारण संसार में सुख, शान्ति व समृद्धि थी। समाज में अन्याय व अभाव नहीं था। इस व्यवस्था के समाप्त होने के कारण ही आज देश, विश्व व समाज में अशान्ति, दुःख, अन्याय व अभाव का प्रभाव सर्वत्र देखा जाता है। इन्हें दूर करने व सबको सच्चे सुख प्रदान कराने के लिए वेद व सच्चे धर्म वैदिक धर्म को जानकर उसका आचरण करना होगा। इसका अन्य कोई दूसरा उपाय नहीं है। जब तक अविद्या युक्त मत-मतान्तर संसार में हैं, इस संसार में अशान्ति बनी रहेगी। एक वेदसम्मत मत होने पर सभी सामाजिक रोग वा बुराईयां स्वतः समाप्त हो जायेंगी।

ईश्वरोपासना वा सन्ध्या में आचमन, इन्द्रिय स्पर्श, मार्जन, प्राणायाम, अघमर्षण, मनसापरिक्रमा, उपस्थान, गायत्री जप, समर्पण एवं नमस्कार मन्त्रों का पाठ, उनके अर्थों का चिन्तन व उसी के अनुरूप भावना का निर्माण किया जाता है। ऐसा करने से हम ईश्वर के असंख्य उपकारों का धन्यवाद कर अपने कर्तव्य की पूर्ति करते हैं। आदि काल से वेदानुयायीजन इसी प्रकार से सन्ध्या करते चले आ रहे हैं। सन्ध्या में मनसा परिक्रमा के 6 मन्त्रों का पाठ व उनके अर्थों का चिन्तन कर उसके अनुरूप भावना बनाई जाती है। सामान्य रूप से मनसा परिक्रमा मन्त्रों में अपनी पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, नीचे व ऊपर की दिशाओं में सर्वव्यापी ईश्वर को अपनी आत्मा व अपने पास अनुभव कर नाना प्रकार से उसके द्वारा हमारी रक्षा किये जाने के लिए उसका नमन के साथ धन्यवाद किया जाता है। ईश्वर सब दिशाओं का स्वामी है। उनमें जो मनुष्य आदि प्राणी हैं, पदार्थ व शक्तियां हैं वह सब ईश्वर की बनाई होने सहित उसके पूर्ण नियन्त्रण में हैं। इन मंत्रों द्वारा ईश्वर को सभी दिशाओं का स्वामी जान व मान कर उसके बनाये नियमों, गुणों, शक्ति, दया आदि अनेकानेक गुणों द्वारा रक्षा करने के लिए उसका नमन किया जाता है। ईश्वर से प्रार्थना में यह भी कहा जाता है कि इन सभी दिशाओं में जो मनुष्य व प्राणी हमसे द्वेष करते हैं वा यदि हम किसी प्राणी से द्वेष करते हैं तो उसे हम ईश्वर की न्याय व्यवस्था में समर्पित करते हैं। यदि हम किसी न्यायाधीश के समक्ष दूसरे का व अपना द्वेष वा अपराध स्वीकार कर उससे न्याय की आशा करते हैं तो हमें निश्चित ही न्याय मिलता है व इस कार्य के लिए न्यायधीश से हम प्रशंसित होते हैं। हमारा ईश्वर रूपी न्यायाधीश तो दूसरों व हमारे सभी के सभी कर्मों को जिन्हें रात्रि के अन्धेरे व दिन के उजाले में किया गया हो, उन सबका साक्षी होता है। उसने तो हमारा व अन्य सबका न्याय करना ही है। हम नहीं कहेंगे तो भी न्याय होगा परन्तु यदि हम स्वयं अपने द्वेष व दूसरों के द्वेष को उसको समर्पित कर देते हैं तो इससे ईश्वर हमारी सदाश्यता को जानकर हमारे प्रति दया व कृपा के अनुसार न्याय तो करेगा ही, हमें भविष्य मे अपराध व द्वेष करने के प्रति आत्म ज्ञान भी प्रदान करेगा जिससे हम भविष्य में पापों को करने से बच सकते हैं। अथर्ववेद के तीसरे काण्ड में स्वयं ईश्वर ने मनसापरिक्रमा विषयक मन्त्र बनाकर हमें प्रदान किये हैं। हमें तो इन्हें जानकर इनसे ईश प्रार्थना मात्र करनी है जिससे हम दूसरों के प्रति द्वेष छोड़ने में समर्थ होते हैं। यह नियम है कि जो मनुष्य अहिंसा को सिद्ध कर लेता है, सभी हिंसक प्राणी भी उसके प्रति अपना वैर भाव त्याग देते हैं अर्थात् उसे किसी प्रकार की पीड़ा नहीं देते। यह उपलब्धि सन्ध्या करते हुए मनसा परिक्रमा के मन्त्रों का सदभाव पूर्वक उच्चारण कर व वैसी ही सच्ची भावना का निर्माण करने से होती है।

हमें इन मनसा परिक्रमा के मन्त्रों में दो ही बातें मुख्य लगती हैं। ईश्वर का हमारा सच्चा रक्षक होने का भाव अपने भीतर उत्पन्न करना, उसका धन्यवाद करना और साथ हि दूसरों के प्रति द्वेष भाव को छोड़ना और दूसरे के हमारे अपने प्रति द्वेष का सीधा यथायोग्य उत्तर न देकर उसे भी ईश्वर को ही अर्पित कर देना। यदि हम दूसरों के द्वेष से पीड़ित होंगे तो हमारा मन व मस्तिष्क उसी में लगा रहेगा और हम उस उलझन में फंसकर रह जायेंगे। यद्यपि वेदानुसार सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य व्यवहार का नियम है तथापि हमें दूसरे लोगों के हमारे प्रति निजी स्तर के द्वेष को सहन करने का प्रयास करना चाहिये और उसे ईश्वर को समर्पित कर देना चाहिये। ऐसे बहुत से उदाहरण हैं कि जब निर्दोष को सताने वाले लोग कालान्तर में बहुत बुरी अवस्था को प्राप्त होते हैं। इससे हमें शिक्षा लेकर वेद प्रदर्शित मार्ग पर आगे बढ़ते रहना चाहिये। यदि हम मनसा परिक्रमा के सभी 6 मन्त्रों को प्रस्तुत करें तो यह काफी स्थान लेगा। अतः हम एक मन्त्र को बानगी के रूप में प्रस्तुत कर रहे हैं। उसके बाद हम सभी 6 मन्त्रों के अर्थ भी प्रस्तुत कर रहे हैं जिससे वैदिक सन्ध्या से अपरिचित बन्धुओं को लाभ होगा।

मनसा परिक्रमा का पहला मन्त्र है **‘ओ३म् प्राची दिगग्निरधिपतिरसितो रक्षितादित्या इषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम एभ्यो अस्तु। यो३स्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भे दध्मः।।’** इसी प्रकार से पांच अन्य मन्त्र है। इस मन्त्र व 5 अन्य मन्त्रों का हिन्दी भाषान्तर इस प्रकार है। पूर्व दिशा या सामने की ओर ज्ञानस्वरूप परमात्मा सब जगत् का स्वामी है। वह बन्धन-रहित भगवान् सब ओर से हमारी रक्षा करता है। सूर्य की किरणें उसके बाण अर्थात् रक्षा के साधन हैं। उन सबके गुणों के अधिपति ईश्वर के गुणों को हम लोग बारम्बार नमस्कार करते हैं। जो ईश्वर के गुण और ईश्वर के रचे पदार्थ जगत् की रक्षा करने वाले हैं और पापियों को बाणों के समान पीड़ा देनेवाले हैं उनको हमारा नमस्कार हो। जो अज्ञान से हमारा द्वेष करता है और जिससे हम द्वेष करते हैं उन सबकी बुराई को उन बाण-रूपी मुख के बीच में दग्ध कर देते हैं। दूसरे मन्त्र का भावार्थः दक्षिण दिशा में सम्पूर्ण ऐश्वर्ययुक्त परमात्मा सब जगत् का स्वामी है। कीट-पतंग, वृश्चिक आदि से वह परमेश्वर हमारी रक्षा करने वाला है। ज्ञानी लोग उसकी सृष्टि में बाण के सदृश हैं। जो अज्ञान से हमारा द्वेष करता है और जिससे हम द्वेष करते हैं उन सबकी बुराई को उन बाण-रूपी मुख के बीच में दग्ध कर देते हैं। तीसरे मन्त्र का अर्थः पश्चिम दिशा में वरुाण सबसे उत्तम परमेश्वर सबका राजा है। वह बड़े-बड़े अजगर, सर्पादि विषधर प्राणियों से रक्षा करने वाला है। पृथिव्यादि पदार्थ उसके बाण के सदृश हैं अर्थात् श्रेष्ठों की रक्षा और दुष्टों की ताड़ना के निमित्त हैं। जो अज्ञान से हमारा द्वेष करता है और जिससे हम द्वेष करते हैं उन सबकी बुराई को उन बाण-रूपी मुख के बीच में दग्ध कर देते हैं। चतुर्थ मंत्र का भावार्थः उत्तर दिशा में सोम-शान्ति आदि गुणों से आनन्द प्रदान करने वाला जगदीश्वर सब जगत् का राजा है। वह अजन्मा और अच्छी प्रकार रक्षा करने वाला है। विद्युत उसके बाण हैं। जो अज्ञान से हमारा द्वेष करता है और जिससे हम द्वेष करते हैं उन सबकी बुराई को उन बाण-रूपी मुख के बीच में दग्ध कर देते हैं। पंचम मंत्र का भावार्थः नीचे की दिशा में विष्णु=सर्वत्र व्यापक परमात्मा सब जगत् का राजा है। वृक्षग्रीवा वाला परमेश्वर सब प्रकार से रक्षा करता है। नाना प्रकार की वनस्पतियां उसके बाण के सदृश हैं। जो अज्ञान से हमारा द्वेष करता है और जिससे हम द्वेष करते हैं उन सबकी बुराई को उन बाण-रूपी मुख के बीच में दग्ध कर देते हैं। छठे मन्त्र का भावार्थः ऊपर की दिशा में बृहस्पति, वाणी, वेदशास्त्र और आकाश आदि बड़ी बड़ी शक्तियों का स्वामी सबका अधिष्ठता है। अपने शुद्ध ज्ञानमय स्वरूप से हमारा रक्षक है। वृष्टि उसके बाणरूप अर्थात् रक्षा के साधन हैं। जो अज्ञान से हमारा द्वेष करता है और जिससे हम द्वेष करते हैं उन सबकी बुराई को उन बाण-रूपी मुख के बीच में दग्ध कर देते हैं।

प्रतिदिन प्रातः एवं सायं ईश्वर का सम्यक् ध्यान वा सन्ध्या करना सभी मनुष्यों का परम कर्तव्य है। जो नहीं करता वह अपराध करता है। ऋषियों का विधान है कि सन्ध्या न करने वाले के सभी अधिकार छीन लेने चाहिये और उसे श्रमिक कोटि का मनुष्य बना देना चाहिये। सन्ध्या पर अनेक विद्वानों ने टीकायें लिखी हैं। पं. विश्वनाथ वेदोपाध्याय, पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय, पं. चमूपति, स्वामी आत्मानन्द सरस्वती जी आदि की टिकायें उपलब्ध हो जाती हैं। अभ्युदय व निःश्रेयस की प्राप्ति के इच्छुक सभी मनुष्यों को प्रतिदिन दोनों समय सन्ध्या अवश्य करनी चाहिये। दैनिक अग्निहोत्र भी दोनों समय करने का विधान है। इससे वायुमण्डल की शुद्धि सहित आरोग्य, निरोगी जीवन, दीघार्यु, भौतिक व आध्यात्मिक उन्नति तथा परजन्म में लाभ आदि अनेक लाभ होते हैं। महर्षि दयानन्द ने अपने जीवन में वैदिक धर्म का पुनरुद्धार और आर्यसमाज की स्थापना कर देश व जाति के सुधार के जो कार्य किये उसमें उनकी योग सिद्धि और ईश्वरोपासना सहित पुरुषार्थ का सर्वाधिक योगदान था। महर्षि दयानन्द ही इस राष्ट्र के सच्चे धर्मोपदेष्टा, सच्चे दूरदर्शी नेता एवं देश की स्वतन्त्रता के पुरोधा थे। उनके द्वारा लिखित सन्ध्या पद्धति के अनुसार काशी के एक बहुत बड़े पौराणिक विद्वान सन्ध्या करते थे और उनका कहना था कि ऋषि दयानन्द रचित सन्ध्या पद्धति सन्ध्या की सर्वोत्कृष्ट विधि है। इसी के साथ हम इस लेख को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**

**ओ३म्**

**‘वेदभाष्यकार एवं वैदिक विद्वान पं. हरिश्चन्द्र विद्यालंकार का संक्षिप्त परिचय’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

आज हम आर्यसमाज के प्रमुख वेदभाष्यकारों की सूची बना रहे थे। इसके लिए हमने सार्वदेशिक सभा, दिल्ली द्वारा प्रकाशित चतुर्वेद भाष्य भाषानुवाद का अवलोकन किया। इससे ज्ञात हुआ कि सभा द्वारा ऋग्वेद के नवम् व दशम् मण्डल का जो भाष्य-भाषानुवाद प्रकाशित किया गया है, उसके भाष्यकारों में पं. आर्यमुनि, पं. शिवशंकर शर्मा काव्यतीर्थ, पं. वैद्यनाथ शास्त्री सहित पं. हरिश्चन्द्र विद्यालंकार जी का भी नाम भी सम्मिलित है। हम पं. हरिश्चन्द्र विद्यालंकार जी के नाम व कृतित्व से अपरिचित थे अतः हमने प्रवर एवं प्रमुख वयोवृद्ध यशस्वी आर्य विद्वान तथा आर्य आर्य लेखक कोष के संकलनकर्ता डा. भवानीलाल भारतीय जी का ग्रन्थ देखा। ग्रन्थ में पं. हरिश्चन्द्र विद्यालंकार जी का संक्षिप्त परिचय मिल गया। इससे यह भी विदित हुआ कि पं. हरिश्चन्द्र जी ने अपने जीवन में अनेक ग्रन्थों का प्रणयन किया। ग्रन्थ में जिन ग्रन्थों के नाम दिये गये हैं वह हैं 1- आर्यसमाज का संक्षिप्त व सुबोध इतिहास, 1998 वि. (सन् 1941), महर्षि दयानन्द सरस्वती जीवन चरित, 2010 वि. (1952), सामवेद संहित भाषा भाष्य (2012 वि.), महात्मा हंसराज (लघु जीवन चरित, 2010 वि.), मनुस्मृति भाषानुवाद (2016 वि.), आर्य डाइरेक्टरी-पं. रामगोपाल विद्यालंकार के संयुक्त सम्पादन में (1938), वैदिक शिष्टाचार, बाल रामायण, माता का सन्देश।

डा. भारतीय जी द्वारा सूचित लेखक के ग्रन्थों व कार्यों में ऋग्वेद के नवम् एवं दशम् मण्डल के भाष्यों का उल्लेख नहीं है। आंशिक भाष्य किये जाने के कारण सम्भवतः ऐसा हुआ हो। इससे यह भी ज्ञात हुआ कि पं. हरिश्चन्द्र जी ने सामवेद का भाषा-भाष्य किया है। इस कारण पं. हरिश्चन्द्र जी आर्य वेदभाष्यकारों में गणना में सम्मिलित हो ही जाते हैं। हमने आज जो कुछ प्रमुख आर्य वेद भाष्यकारों की सूची बनाई है वह हम शीघ्र पृथक से एक लेख में प्रस्तुत करेंगे जो साधारण कोटि के स्वाध्याय प्रेमियों के लिए उपयोगी होगी और इसके साथ ही आर्य समाज के विद्वान हमारा भी मार्गदर्शन व इसमें कमियों की ओर हमारा ध्यानाकर्षण वा ज्ञानवर्धन करेंगे। अभी तक हमारी जानकारी में आर्यसमाज में किसी विदुषी माता व बहिन ने वेदों का भाष्य नहीं किया है। यदि ऐसा हुआ होता तो इस पर आर्यसमाज गर्व कर सकता था क्योंकि मध्यकाल में हमारे पौराणिक विद्वानों वा पण्डितों ने स्त्री जाति के वेदाधिकार को छीन लिया था वा उन्हें इस अधिक से च्युत कर दिया था। हमने अनेक बार आर्यसमाज की विदुषी बहिन डा. सूर्यादेवी जी से किसी एक वेद व अधिक पर वेद भाष्य करने का अनुरोध किया है। नवम्बर, 2016 में परोपकारिणी सभा द्वारा आयोजित ऋषि मेले के अवसर पर उनके दर्शन हुए थे, वहां भी हमने उनसे निवेदन किया जिसे उन्होंने स्वीकार भी किया। यदि वह किसी एक वेद पर भी भाष्य कर देती हैं तो यह आर्यसमाज के द्वारा किये गये कार्यों में ऐतिहासिक कार्य होगा जिससे हमारे ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज गौरवान्वित होगा और पौराणिक मान्यताओं का दमन हो सकेगा। यह भी बता दें कि सन् 1994 में तमिलनाडु प्रदेश की विधानसभा में एक सदस्य के प्रश्न के उत्तर में संबंधित मंत्री द्वारा बताया गया था कि स्त्री को वेद पढ़ने का अधिकार नहीं है। आज भी हमारे पौराणिक आचार्य व कुछ शंकराचार्य आदि इसी मान्यता का मानते हैं। बहिन सूर्यादेवी जी में वेदभाष्य करने की प्रतिभा है, अतः हमें यह उचित प्रतीत होता है कि उन्हें इस कार्य को सर्वोपरि महत्व देना चाहिये। इससे उनका व उनके आचार्य ऋषि दयानन्द का यश व गौरव बढ़ेगा, यही हम चाहते है।

पं. हरिश्चन्द्र विद्यालंकार जी के जिन ग्रन्थों का उल्लेख उपर्युक्त सूची में है, आज उनमें से कोई एक ग्रन्थ भी कहीं से उपलब्ध नहीं होता। आर्यसमाज की सभाओं को लेखक के ग्रन्थों के संरक्षण की ओर ध्यान देना चाहिये। यदि इन सबकी पीडीएफ बनाकर किसी साइट पर डाल दी जाये तो पाठकों को सुविधा होने के साथ ग्रन्थों का संरक्षण स्वतः ही हो जायेगा। आशा है कि हमारे नेतागण इस पर ध्यान देंगे।

आर्य लेखक कोष में पं. हरिश्चन्द्र विद्यालंकार जी का जो संक्षिप्त परिचय दिया गया है उसे भी पाठक महानुभावों के लिए प्रस्तुत कर रहे हैं। डा. भारतीय लिखते हैं ‘सामवेद के हिन्दी टीकाकार तथा उत्कृष्ट लेखक श्री हरिश्चन्द्र विद्यांलकार का जन्म 3 सितम्बर, 1903 को सोनीपत जिले के फरमाना ग्राम में हुआ। (आर्यजगत के सुप्रसिद्ध संन्यासी, दर्शन योग महाविद्यालय के संस्थापक तथा योग की प्रमुख विभूति स्वामी सत्यपति जी का जन्म ग्राम भी फरमाना ही है। -मनमोहन)। 1981 वि. (1925) में आपने गुरुकुल कांगड़ी से विद्यालंकार की उपाधि प्राप्त की। कुछ समय तक आपने गुरुकुल मुल्तान तथा गुरुकुल कुरुश्रेत्र में मुख्याध्यापक का कार्य किया तथा दिल्ली से हिन्दू तथा लोकमान्य नामक साप्ताहिक पत्रों का सम्पादन किया। भारत की राजधानी दिल्ली में आपका निजी प्रेस था। इनका निधन 1974 में हुआ।’ इस विवरण को प्रस्तुत करने के लिए हम डा. भारतीय जी का हृदय से आभार व्यक्त करते हैं।

पं. हरिश्चन्द्र विद्यालंकार जी का चित्र उपलब्ध न होने के कारण हम प्रस्तुत नहीं कर पा रहे हैं। यदि किसी बन्धु के पास उपलब्ध हो तो कृपया हमें हमारे दूरभाष नं. 09412985121 पर व्हटशप करने अथवा उंदउवींदंतलं/हउंपसण्बवउ पर इमेल से भेजने की कृपा करें। ओ३म् शम्।

**मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**